अथ कीलकम्

ॐ अस्य श्रीकीलकमन्त्रस्य शिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहासरस्वती देवता, श्रीजगदम्बाप्रीत्यर्थं सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः।

ॐ नमश्चण्डिकायै॥

मार्कण्डेय उवाच

ॐ विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे।
श्रेयःप्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्धधारिणे॥ १॥

सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणामभिकीलकम्।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः॥ २॥

सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि।
एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति॥ ३॥

ॐ चण्डिकादेवीको नमस्कार है।

मार्कण्डेयजी कहते हैं—विशुद्ध ज्ञान ही जिनका शरीर है, तीनों वेद ही जिनके तीन दिव्य नेत्र हैं, जो कल्याण-प्राप्तिके हेतु हैं तथा अपने मस्तकपर अर्धचन्द्रका मुकुट धारण करते हैं, उन भगवान् शिवको नमस्कार है॥ १॥ मन्त्रोंका जो अभिकीलक है अर्थात् मन्त्रोंकी सिद्धिमें विघ्न उपस्थित करनेवाले शापरूपी कीलकका जो निवारण करनेवाला है, उस सप्तशतीस्तोत्रको सम्पूर्णरूपसे जानना चाहिये (और जानकर उसकी उपासना करनी चाहिये), यद्यपि सप्तशतीके अतिरिक्त अन्य मन्त्रोंके जपमें भी जो निरन्तर लगा रहता है, वह भी कल्याणका भागी होता है॥ २॥ उसके भी उच्चाटन आदि कर्म सिद्ध होते हैं तथा उसे भी समस्त दुर्लभ वस्तुओंकी प्राप्ति हो जाती है; तथापि जो अन्य मन्त्रोंका जप न करके केवल इस सप्तशती नामक स्तोत्रसे ही देवीकी स्तुति करते हैं, उन्हें स्तुतिमात्रसे ही सच्चिदानन्दस्वरूपिणीदेवी सिद्ध हो जाती हैं॥ ३॥

न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते।
विना जाप्येन सिद्ध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम्॥ ४॥
समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशङ्कामिमां हरः।
कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम्॥ ५॥
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः।
समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथावन्नियन्त्रणाम्॥ ६॥
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेवं न संशयः।
कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः॥ ७॥

उन्हें अपने कार्यकी सिद्धिके लिये मन्त्र, ओषधि तथा अन्य किसी साधनके उपयोगकी आवश्यकता नहीं रहती। बिना जपके ही उनके उच्चाटन आदि समस्त आभिचारिक कर्म सिद्ध हो जाते हैं॥ ४॥ इतना ही नहीं, उनकी सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुएँ भी सिद्ध होती हैं। लोगोंके मनमें यह शंका थी कि 'जब केवल सप्तशतीकी उपासनासे अथवा सप्तशतीको छोड़कर अन्य मन्त्रोंकी उपासनासे भी समानरूपसे सब कार्य सिद्ध होते हैं, तब इनमें श्रेष्ठ कौन-सा साधन है?' लोगोंकी इस शंकाको सामने रखकर भगवान् शंकरने अपने पास आये हुए जिज्ञासुओंको समझाया कि यह सप्तशती नामक सम्पूर्ण स्तोत्र ही सर्वश्रेष्ठ एवं कल्याणमय है॥ ५॥

तदनन्तर भगवती चण्डिकाके सप्तशती नामक स्तोत्रको महादेवजीने गुप्त कर दिया। सप्तशतीके पाठसे जो पुण्य प्राप्त होता है, उसकी कभी समाप्ति नहीं होती; किंतु अन्य मन्त्रोंके जपजन्य पुण्यकी समाप्ति हो जाती है। अतः भगवान् शिवने अन्य मन्त्रोंकी अपेक्षा जो सप्तशतीकी ही श्रेष्ठताका निर्णय किया, उसे यथार्थ ही जानना चाहिये॥ ६॥ अन्य मन्त्रोंका जप करनेवाला पुरुष भी यदि सप्तशतीके स्तोत्र और जपका अनुष्ठान कर ले तो वह भी पूर्णरूपसे ही कल्याणका भागी होता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। जो साधक कृष्णपक्षकी चतुर्दशी अथवा अष्टमीको एकाग्रचित्त होकर भगवतीकी सेवामें अपना सर्वस्व समर्पित कर देता है और फिर उसे प्रसादरूपसे ग्रहण करता है, उसीपर भगवती

ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति।
इत्थंरूपेण कीलेन महादेवेन कीलितम्॥ ८ ॥
यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम्।
स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः॥ ९ ॥
न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते।
नापमृत्युवशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात्॥ १० ॥
ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति।
ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रारभ्यते बुधैः॥ ११ ॥

प्रसन्न होती हैं; अन्यथा उनकी प्रसन्नता नहीं प्राप्त होती।[1] इस प्रकार सिद्धिके प्रतिबन्धकरूप कीलके द्वारा महादेवजीने इस स्तोत्रको कीलित कर रखा है॥ ७-८॥ जो पूर्वोक्त रीतिसे निष्कीलन करके इस सप्तशतीस्तोत्रका प्रतिदिन स्पष्ट उच्चारणपूर्वक पाठ करता है, वह मनुष्य सिद्ध हो जाता है, वही देवीका पार्षद होता है और वही गन्धर्व भी होता है॥ ९॥ सर्वत्र विचरते रहनेपर भी इस संसारमें उसे कहीं भी भय नहीं होता। वह अपमृत्युके वशमें नहीं पड़ता तथा देह त्यागनेके अनन्तर मोक्ष प्राप्त कर लेता है॥ १०॥ अतः कीलनको जानकर उसका परिहार करके ही सप्तशतीका पाठ आरम्भ करे। जो ऐसा नहीं करता, उसका नाश हो जाता है।[2] इसलिये कीलक और निष्कीलनका ज्ञान प्राप्त करनेपर ही यह स्तोत्र निर्दोष होता है और विद्वान् पुरुष इस निर्दोष स्तोत्रका ही पाठ आरम्भ करते हैं॥ ११॥

१. यह निष्कीलन अथवा शापोद्धारका ही विशेष प्रकार है। भगवतीका उपासक उपर्युक्त तिथिको देवीकी सेवामें उपस्थित हो अपना न्यायोपार्जित धन उन्हें अर्पित करते हुए एकाग्रचित्तसे प्रार्थना करे—'मातः! आजसे यह सारा धन तथा अपने-आपको भी मैंने आपकी सेवामें अर्पण कर दिया। इसपर मेरा कोई स्वत्व नहीं रहा।' फिर भगवतीका ध्यान करते हुए यह भावना करे, मानो जगदम्बा कह रही हैं—'बेटा! संसार-यात्राके निर्वाहार्थ तू मेरा यह प्रसादरूप धन ग्रहण कर।' इस प्रकार देवीकी आज्ञा शिरोधार्य करके उस धनको प्रसाद-बुद्धिसे ग्रहण करे और धर्मशास्त्रोक्त मार्गसे उसका सद्व्यय करते हुए सदा देवीके ही अधीन होकर रहे। यह 'दानप्रतिग्रह-करण' कहलाता है। इससे सप्तशतीका शापोद्धार होता और देवीकी कृपा प्राप्त होती है।

२. यहाँ कीलक और निष्कीलनके ज्ञानकी अनिवार्यता बतानेके लिये ही विनाश

सौभाग्यादि च यत्किञ्चिद् दृश्यते ललनाजने।
तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम्॥ १२॥
शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे सम्पत्तिरुच्चकैः।
भवत्येव समग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत्॥ १३॥
ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः।
शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः॥ॐ॥ १४॥

इति देव्याः कीलकस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

स्त्रियोंमें जो कुछ भी सौभाग्य आदि दृष्टिगोचर होता है, वह सब देवीके प्रसादका ही फल है। अतः इस कल्याणमय स्तोत्रका सदा जप करना चाहिये॥ १२॥ इस स्तोत्रका मन्दस्वरसे पाठ करनेपर स्वल्प फलकी प्राप्ति होती है और उच्चस्वरसे पाठ करनेपर पूर्ण फलकी सिद्धि होती है। अतः उच्चस्वरसे ही इसका पाठ आरम्भ करना चाहिये॥ १३॥ जिनके प्रसादसे ऐश्वर्य, सौभाग्य, आरोग्य, सम्पत्ति, शत्रुनाश तथा परम मोक्षकी भी सिद्धि होती है, उन कल्याणमयी जगदम्बाकी स्तुति मनुष्य क्यों नहीं करते?॥ १४॥

होना कहा है। वास्तवमें किसी प्रकार भी देवीका पाठ करे, उससे लाभ ही होता है। यह बात वचनान्तरोंसे सिद्ध है।